राजनीति में धर्म का समन्वय और गाँधी जी का दृष्टिकोण

डॉ0 (सूफ़ी) शकील अहमद
प्रवक्ता
इतिहास विभाग, मुमताज़ पी0जी0 कालेज, लखनऊ

महात्मा गाँधी का जीवन–चक्र 79 वर्ष की अवस्था में समाप्त हो गया। उनके जीवन का अन्त भारत एवं भारतीयों के प्रति अत्यन्त दुखदायी साबित हुआ। उन्हें अपने देश व देश–वासियों के हितों के प्रति ऐसी चिन्ताग्नि व्याप्त थी कि जिसकी सहजता से कल्पना नहीं की जा सकती है। उस महान आत्मा की कमी भारत में प्रत्येक व्यक्ति द्वारा सदैव अनुभव की जाती रहेगी।

गाँधी जी अपने परिश्रम, दूरदर्शिता एवं बुद्धिमत्ता तथा अपने अमृत–विचार से देश की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति की अपेक्षाकृत 'राजनीति' की वास्तविकता का स्वरूप बनाने, संवारने तथा उसे निष्ठावान एवं सत्य मार्ग की ओर ले चलने का दिशा–निर्देश करना अपना पवित्र कर्तव्य समझते थे। उनका उद्देश्य भारत में रहने वाले समस्त विशेषकर हिन्दू–मुस्लिम के मध्य पारस्परिक रूप से भ्रातृ–भाव के रिश्तों को मज़बूत बनाना था। वे भारत की एकता एवं अखण्डता को सुदृढ़ बनाकर भारत में रहने वाले सभी धर्म, सम्प्रदाय एवं जाति के लोगों में बिना किसी भेद–भाव के सेवा–भाव उत्पन्न करना चाहते थे। परन्तु खेद। कि नाथू राम गोडसे की रक्त पिपातु अग्नि ने उनके जीवन के अध्याय को सदैव के लिए समाप्त कर के भारत के इतिहास में अपनी नीचता एवं क्रूरता का परिचय दिया।

गाँधी जी पर्याप्त दूरदर्शी व्यक्ति थे। वे सबलता व अबलता के मध्य भेद को अच्छी तरह समझते थे। उन्होंने कभी भी राजनीति में हथियारों का सहारा लेने की सलाह नहीं दी। उन्होंने मानवीयता की परिधि में रहकर शान्तिमय रूप से सत्याग्रह का ही आश्रय लिया और लोगों को भी इसका अनुसरण करने की प्रेरणा दी।

गाँधी जी ने 'सत्या–गृह' आन्दोलन रूपी हथियार का प्रयोग सन् 1893 में दक्षिण अफ्रीका में अपनी यात्रा के दौरान किया। इन्होंने अंग्रेज़ों के द्वारा अश्वेतों के प्रति किये जाने वाले अमानवीय अत्याचार शोषण व अपमान के विरुद्ध अपने इस अनूठे अस्त्र का प्रयोग किया। इसमें उन्हें सफलता मिली और साथ ही साथ वे जन–प्रिय होकर 'प्रसिद्धि' के पात्र भी बन गये।

उन दिनों गाँधी जी की क्रिया कलापों तथा उसमें प्राप्त सफलता का समाचार भारत पहुंचता रहता था। उनकी इस अनोखी रणनीति का प्रभाव भारत के आन्दोलनकारियों पर पड़ना भी स्वाभाविक ही था। उनकी इस 'अहिंसात्मक प्रभावी नीति' से बुजुर्ग राष्ट्रवादी नेता श्री गोपाल कृष्ण गोखले जी अत्यन्त प्रभावित हुए।

गाँधी जी 1915 में भारत वापस आये। वे अंग्रेज़ों की भारतीयों के प्रति क्षत–विक्षत स्थिति को देखकर बहुत दुःखी हुए। उनका हृदय अपने देशवासियों के प्रति होने वाले

ब्रिटिश अत्याचारों तथा असन्तोषात्मक कार्यवाहियों से छट–पटा उठा। वे निरंतर भारतीय राजनैतिक स्थिति का जायज़ा लेते रहे। परन्तु स्थिति को और अधिक गम्भीर होता देख उन्होंने 1915 में ही भारत की राजनीति में प्रवेश किया और सक्रियता से कार्य करना शुरू कर दिया। अन्ततोगत्वा गाँधी जी के नेतृत्व में एक लम्बी लड़ाई के पश्चात् सन् 1947 में भारत को ब्रिटिश साम्राज्यवादियों से मुक्ति मिली। स्वतंत्रता के पश्चात भारत को प्रजा तन्त्रात्मक देश घोषित कर के इसे सर्वमान्य संविधान का लिबास पहनाया गया। इस प्रकार जाति, वर्ग, लिंग आदि का भेद मिटाकर एक नवनिर्मित, नवीन, सुखद राष्ट्र की रचना की गई।

हमें यह जानना चाहिए कि **राजनीति प्रजातन्त्रात्मक देश की एक ऐसी नदी होती है जिसे पार करने के लिए धर्म, सम्प्रदाय, जाति, लिंग–भेद आदि को त्यागकर 'सर्व–धर्म समभाव' तथा 'सर्व–जन–एक समान' की नीति का अनुसरण किया जाता है।** परन्तु कुछ लोग इस मार्ग में आकर अपनी विशिष्टता स्थापित करने और तमाम जनमानस में सदाबहार बनने के लिए तरह–तरह से प्रयत्नों में जुटे रहते हैं। वे विभिन्न प्रकार की कल्पनायें करके भोले–भाले लोगों को अपनी राजनीतिक दाँव–पेंच से निर्मित मक्कारी के स्वर्णिम जाल में फंसाकर राजनीति किया करते हैं, और राज किया करते हैं। वे ही लोग अपनी नेतागीरी से लेकर दादागीरी तक अपना दायित्व तथा स्थायित्व बनाने तथा अपना वर्चस्व बरकरार रखने के लिए आये दिन नये–नये रंग–ढंग अपनाकर विभिन्न मुद्दे छेड़ते रहते हैं। यह उनका हथकन्डा होता है जिस के द्वारा वे आम जनता के ध्यान को मुख्य बिन्दओं से हटा देने का कार्य बड़ी चतुराई से करते हैं। ऐसे धूर्त व छली राजनेता भोली–भाली जनता को कभी अपनी मोहनी और कभी ओजस्वी कोरे भाषणों से लोगों को फंसाने के हरदम काम में लगे रहते हैं और स्वयं को बाँकुरों की फेहरिस्त में नाम दर्ज करा लेते हैं। बेचारी भोली–भाली जनता उनके मक्र व फरेब के जाल में फंसकर सालहा साल छटपटाती रहती है, और साथ ही अपने किये पर पछताती भी रहती है। हर बार जनता के साथ ऐसा ही भोंडा मज़ाक होता रहता है।

भारत एक धार्मिक देश है। जिसमें विभिन्न धर्म के अनुयायी निवास करते हैं। परन्तु देश के लोगों में भावुकता का समुद्र उमड़ पड़ना कोई विशेष बात नहीं है। किसी विदेशी ने भारत के विषय में कहा है – ''इण्डिया इज़ अ बिग डिमोक्रेटिक कन्ट्री बट इण्डियन्स आर इमोशनल्ज़'' ''India is a big democratic country but Indians are all emotionals.''

भारत एक बड़ा लोकतांत्रिक देश है परन्तु भारतीयोंमें बहुत भावुकता का समावेश हैं जो शत–प्रतिशत सत्य ही प्रतीत होता है। वास्तव में यहां के लोगों में धार्मिक उन्माद अन्य देशों की अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है। यहां जिस क्रिया–कलाप को भी धर्म से जोड़ दिया जाता है धर्म के अनुसरण कर्ताओं में उस के प्रति केवल झुकाव ही नहीं होता बल्कि उसके लिए वे मरने–मारने तक तुल जाते हैं। यही कारण है कि साधारणतया यहां का व्यक्ति भावुक अधिक, यथार्थ भाव पर पकड़ कम रखता है। पारखी दृष्टि का पर्याप्त अभाव है। फलतः आज के धार्मिक अथवा साम्प्रदायिक झगड़े इसका ज्वलन्त उदाहरण हैं। इन्हीं अवसरों पर हमारे मधु–भाषी राजनेता मानो अपने–अपने कठघरे से निकल कर अपने अपने चातुर्यपूर्ण वक्तव्य देने का एक अनूठा अवसर जान उस पर झपट्टा मार लेते हैं और वे

इस आड़ में अपने 'वोट–बैंक' के अधूरे स्वप्न को पूर्ण करते हैं। दुर्भाग्यवश जहां की अधिकांश जनसंख्या अनपढ़ तथा बुद्धि के विपरीत कार्यरत हो फिर वहां का क्या कहना। ख़ुदा ही हाफ़िज़ है।

अब प्रश्न यह उठता है कि भारत की राजनीति कैसी हो? भारत की राजनीति धर्म प्रभावित होनी चाहिए अथवा राजनीति तथा धर्म एक दूसरे से अलग हों। जब हम इस प्रश्न का उत्तर तलाशते हैं तो इसके सम्बन्ध में दो प्रकार की विचार धाराएं सामने आती हैं। एक मत के अनुसार राजनीति में धर्म का समन्वय तथा दूसरे मत के समर्थकों का कहना है कि राजनीति और धर्म दो अलग–अलग मार्ग हैं। दोनों का एक साथ रखा जाना भारत जैसे देश, जिसमें विभिन्न धर्म, सम्प्रदाय तथा जाति के लोग, जो अपने–अपने धर्मानुसार रीतिरिवाजों के आधार पर अपनी अलग–अलग पहचान रखना चाहते हैं, उनके लिए अपनी पहचान बनाये रखना बहुत कठिन होगा। ''धर्म प्रभावित राजनीति'' पारस्परिक रूप से एक दूसरे के प्रति कड़वाहट भी उत्पन्न कर सकती है। अतः राजनीति में धर्म का समन्वय न होना ही बेहतर है। साथ इसके यह भी कहना है कि यह आवश्यक नहीं कि कोई राजनीतिज्ञ एक धर्म निष्ठ व्यक्ति भी हो या एक धार्मिक व्यक्ति एक कुशल राजनीतिज्ञ भी हो।

कुछ लोगों का यह भी विचार है कि यदि धर्म को राजनीति में समन्वय कर लिया जाए, तो हठधर्मी, धर्मान्धता तथा विभिन्न धर्म, सम्प्रदाय तथा जातियों के मध्य असामन्जस्य तथा असन्तोष का वातावरण उत्पन्न हो जायेगा। अतएव ये मानवीयता के आधार पर किसी प्रकार न्याय संगत न होगा।

कुछ लोग राजनीति में धर्म का विलय अथवा धर्म युक्त राजनीति का हार्दिक स्वागत करते हैं तथा आधुनिक राजनीति में इसकी आवश्यकता पर भी बल देते हैं। परन्तु उनका नज़रिया काफ़ी बदला हुआ है। उनका कहना है कि **चूंकि भारत की बहुसंख्यक जनता हिन्दू है, अतएव भारत को 'हिन्दू देश घोषित किया जाना चाहिए। देश को हिन्दू धर्म विधि–विधान द्वारा ही चलाया जाना चाहिए।**'

महात्मा गाँधी जिन्होंने अपने समय में जो राजनीति में धर्म का विलय की आवश्यकता महसूस की थी उसके परोक्ष उन्होंने अत्यन्त तार्किक एवं बौद्धिक रूप से मार्ग–दर्शन दिया। उनका मत था कि ईश्वर से डरने वाले व्यक्ति से अपेक्षाकृत ग़लतियाँ कम होने की सम्भावना रहती है। ऐसा व्यक्ति न्याय के नाम पर किसी के साथ किसी धर्म, सम्प्रदाय अथवा जाति का भेद–भाव बरते बिना निष्पक्ष न्याय करने से कभी संकोच नहीं करेगा।

गाँधी जी राजनीति के मार्ग से जन–सेवा करना चाहते थे। उनका विचार था कि ''धर्म मुक्त राजनीति'' केवल लोगों की भयावह माहौल उत्पन्न करने का मार्ग प्रशस्त कर सकती है अथवा जनसेवा के स्थान पर आत्म–सेवा, आत्म–सम्मान, आत्म–वर्चस्व की भावना उत्पन्न कर सकती है।

यह स्पष्ट है कि जहां धर्म होगा, वहां अध्यात्मवाद का पाया जाना भी आवश्यक होगा। इसमें रमे हुए व्यक्ति में जन–सेवा का संचार का होना नितान्त आवश्यक है। धर्म

रहित राजनीति के विषय में उन्होंने कहा था "Politics devoid of religion is a death trap because it kills the soul."

धर्म प्रधान राजनीति मौत की खाई है जो आत्मा का वध कर देती है।

कुछ लोगों ने तो राजनीति को समय व्यतीत करने का साधन अथवा आमोद–प्रमोद अथवा मनोरंजन का साधन बना लिया है। ऐसे लोग राजनीति के प्रारम्भिक पाठ से भी बेखबर हैं।वे अपनी अल्पज्ञता के स्वयं शिकार हैं। गाँधी जी का कहना था कि राजनीतिक–मार्ग से तो ''मानव–सेवा तथा ईश्वर सेवा'' की कल्पना की जानी चाहिए। उन्होंने कभी भी धर्म का राजनीति में प्रवेश का अर्थ हिन्दू धर्म को किसी अन्य धर्म के लोगों के सर थोपना नहीं बताया है। बल्कि धर्म के मार्ग से प्राप्त नैतिकता के प्रवेश पर ज़ोर दिया है। उन्होंने तो "the religion of the superiority of moral values" को प्राथमिकता दी है न किसी धर्म विशेष को।

गाँधी जी का मत था वे व्यक्ति जो धार्मिकता एवं नैतिकता से परिपूर्ण हो, वे ही राजनैतिक कार्य में लगकर देश तथा देश वासियों की सेवा कार्य कर सकने में समर्थ हो सकते हैं। न कि घड़ियाली आंसू बहाने वाले आज के भ्रष्ट अगुवाकार मंच पर सुन्दर/सुन्दर शब्द बोध कराने वाले, अवसरवादी,सम्प्रदायवादी, जातिवादी, अतिवादी, राजनीतिज्ञों के स्थान पर शुद्ध मानवतावादी तथा राष्ट्रवादी हों जो ''मनसा–वाचा–कर्मणा'' के सूत्र के पूर्ण परिपालक हों। केवल ऐसे महानुभाव ही गाँधी जी के अनुभव ''नव–भारत निर्माण'' की परिकल्पना को साकार रूप प्रदान कर के ''सर्व–धर्म, सम–भाव'', ''सर्व–जन–एक–समान'' का उदाहरण देकर विभिन्न कष्टों में फंसी और कराहती हुई जनता की समस्याओं का निदान कर सकते हैं। भारत की एकता व अखण्डता की बहकती हुई भावना को एकाग्र एवं प्रशस्त बनाकर अपने देश को विश्व के समक्ष सर्वोपरि अथवा सर्व–गण्य देश बनाने में सक्षम हो सकते हैं।